पाठ्यक्रम - २८

२८.अ जैन ज्योतिर्लोक

पृथ्वी तल से बहुत दूर आकाश में, हमें सूर्य, चन्द्रमा, तारे आदि दिखाई पड़ते हैं। इनके द्वारा ही दिन और रात का विभाजन होता है। इनके स्वरूप और स्थिति के बारे में आधुनिक वैज्ञानिकों ने अनेक प्रकार की घोषणाएँ की हैं जो प्राय: काल्पनिक एवं भ्रम में डालने वाली हैं। जैसे सूर्य आग का धधकता गोला है, पृथ्वी से सूर्य २१० गुना बड़ा है, चन्द्रमा की उत्पत्ति पृथ्वी से हुई है, चन्द्रमा पर सूर्य का प्रकाश गिर कर परावर्तित होता है इस कारण चन्द्रमा प्रकाशित होता है तथा वैज्ञानिक चन्द्रमा पर पहुँच गए है इत्यादि। जैनाचार्यों द्वारा प्रणीत ग्रंथों में इन सबका विस्तृत वर्णन किया गया है। यहाँ उपलब्ध ग्रन्थों के अनुसार संक्षेप में ज्योतिर्लोक का वर्णन करते हैं।

सूर्य-चन्द्रमा के विमान

सूर्य, चन्द्रमा, ग्रह, नक्षत्र और तारे-ये सब ज्योतिष निकाय के देव हैं। आकाश में दिखने वाले सूर्य-चन्द्रमा आदि इन्हीं देवों के विमान हैं। इन विमानों का आकार अर्ध गोलाकार होता है। अर्थात् जिस प्रकार गोले के दो खण्ड करके उन्हें ऊर्ध्वमुख रखा जाएँ तो चौड़ाई का भाग ऊपर एवं गोलाई वाला भाग नीचे रहता है। इसी प्रकार ऊर्ध्वमुख अर्धगोले के सदृश ज्योतिष देवों के विमान हैं। इन विमानों के नीचे का गोलाकार भाग ही हमारे द्वारा देखा जाता है। ये विमान पृथ्वीकायिक (चमकीली धातु) के बने हुए, अकृत्रिम है। सूर्य के बिम्व में स्थित पृथ्वीकायिक जीव के आताप नाम कर्म का उदय से सूर्यविमान मूल में ठन्डा होने पर भी उसकी किरणे गरम होती हैं। चन्द्र बिम्ब में स्थित पृथ्वीकायिक जीव के उद्योत नाम कर्म का उदय होने से चन्द्र विमान मूल में ठन्डा है एवं उसकी किरणें भी शीतल हैं। इसी प्रकार तारा आदि के विमानों में भी उद्योत नामकर्म का उदय जानना चाहिए।

सूर्य-चन्द्र की गणना

सूर्य-चन्द्र आदि एक - दो नहीं किन्तु असंख्यात (जिन्हें गिना न जा सके) हैं। एक राजू प्रमाण लम्बे और एक राजू प्रमाण चौड़े मध्यलोक में पूर्व-पश्चिम घनोदधि वातवलय पर्यन्त सूर्यादि के विमान फैले हुए हैं। जम्बूद्वीप में दो सूर्य एवं दो चन्द्रमा है एक चन्द्रमा के परिवार में एक सूर्य, अठासी(88) ग्रह, अट्ठाईस (28) नक्षत्र एवं छयासठ हजार नौ सौ पचहत्तर कोड़ा-कोड़ी (66975 कोड़ा-कोड़ी) तारे होते हैं।

लवण समुद्र में चार चन्द्रमा अपने परिवार विमानों सहित है। धातकी खण्ड में बारह (12) चन्द्रमा , कालोदधि समुद्र में ब्यालीस चन्द्रमा अपने सूर्यादि के विमानों के परिवार सहित होते हैं। इसके आगे मानुषोत्तर पर्वत के परभाग वाले पुष्करार्ध द्वीप के प्रथम वलय में एक सौ चवालीस (144) चन्द्रमा परिवार सहित हैं एवं इस द्वीप में अंतिम वलय में इनकी संख्या (288) दो सौ अट्ठासी हो जाती है। आगे इनकी संख्या बढ़ते-बढ़ते अन्तिम स्वयम्भू रमण समुद्र तक असंख्यात हो जाती है।

सूर्य-चन्द्रमा आदि का अवस्थान

पृथ्वी तल से सात सौ नब्बे (790) योजन की ऊँचाई से लेकर नौ सौ (900) योजन तक की ऊँचाई में ज्योतिष मण्डल अवस्थित है। भूमि के समतल भाग से सात सौ नब्बे (790) योजन ऊपर, सबसे नीचे तारागण हैं, उनसे दस योजन ऊपर प्रतीन्द्र सूर्य और उससे अस्सी योजन ऊपर इन्द्र चन्द्रमा भ्रमण करते हैं। चन्द्रमा से तीन योजन ऊपर नक्षत्र और नक्षत्र से तीन योजन ऊपर बुध के विमान स्थित हैं। बुध ग्रह से तीन योजन ऊपर शुक्र, शुक्र से तीन योजन ऊपर बृहस्पति, उससे चार योजन ऊपर मंगल एवं मंगल से चार योजन ऊपर शनि ग्रह भ्रमण करता है। इस प्रकार सम्पूर्ण ज्योतिष मण्डल एक सौ दस (110) योजन नभस्थल में स्थित है।

सूर्य-चन्द्रमा का गमन

ढाई द्वीप और दो समुद्र सम्बन्धी ज्योतिषी देव (विमान) मेरु पर्वत से ग्यारह सौ इक्कीस (1121) योजन छोड़कर मेरु पर्वत की प्रदक्षिणा करते हुए निरन्तर गमन करते हैं। इनसे बाह्य क्षेत्र के ज्योतिषी देव अवस्थित हैं।

इन सूर्य और चन्द्रमा आदि को आभियोग्य जाति के देव खींचते हैं। चन्द्र और सूर्य के पूर्व दिशा में चार हजार देव सिंह के आकार को धारण कर, दक्षिण में 4000 देव हाथी के आकार को धारण कर, पश्चिम में 4000 देव बैल के आकार को धारण कर एवं उत्तर में 4000 देव घोड़े के आकार को धारण कर ऐसे 16000 देव सतत् खींचते रहते हैं। इसी प्रकार ग्रहों को कुल 8000 देव, नक्षत्रों को 4000 देव एवं ताराओं को 2000 वाहन जाति के देव खींचते रहते हैं।

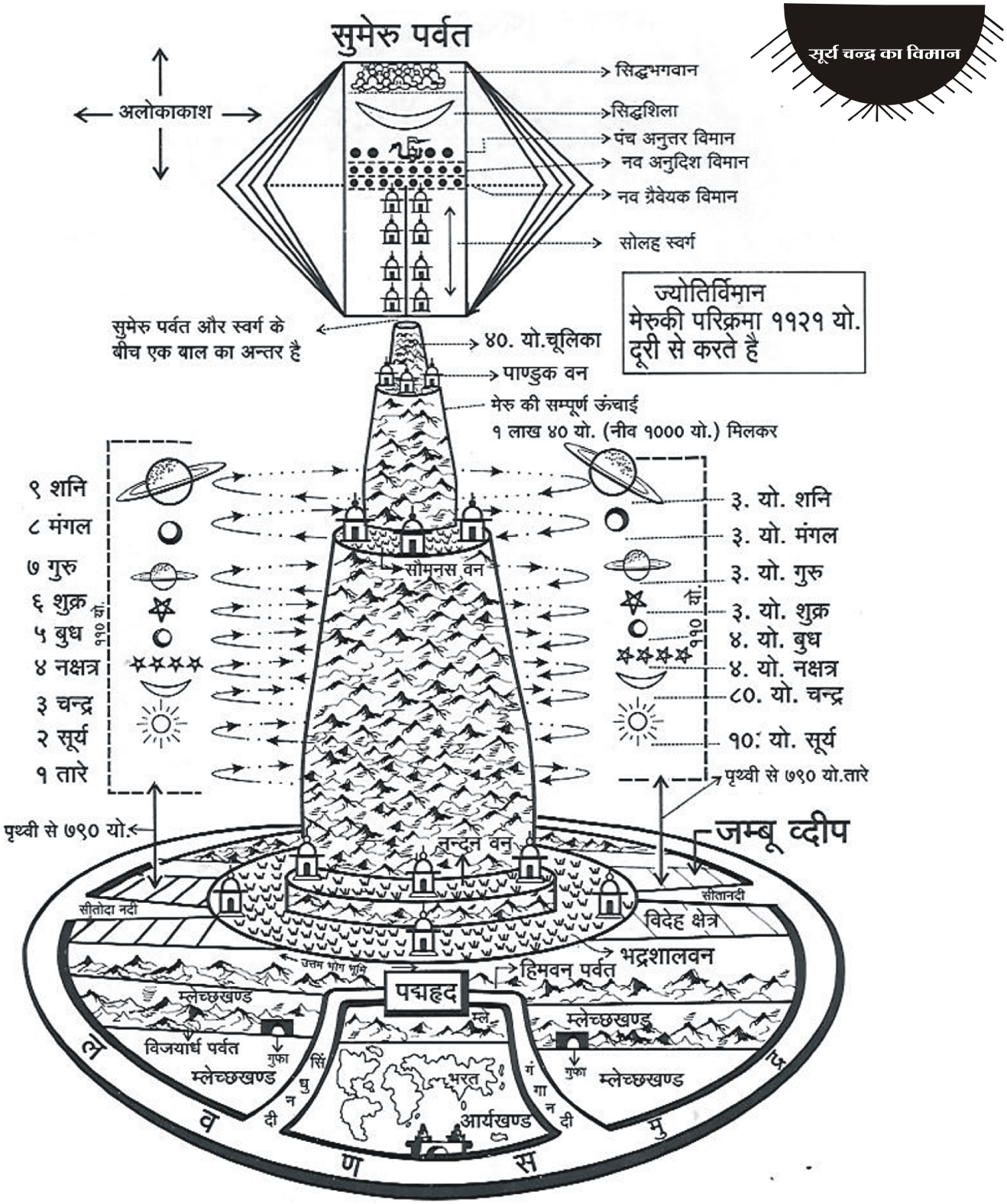

२८.ब श्रावक व श्रमण का अंतिम कर्त्तव्य- सल्लेखना

सल्लेखना का स्वरूप-

अच्छे प्रकार से काय और कषाय का कृश करना सल्लेखना है। उपसर्ग आने पर, दुर्भिक्ष आने पर, बुढ़ापा आने पर और असाध्य रोग आने पर, धर्म की रक्षा के लिए सल्लेखना ली जाती है।

सल्लेखना की विधि- जो सल्लेखना धारण करता है, वह क्षपक कहलाता है। वह क्षपक सबसे राग, द्वेष, मोह और परिग्रह को छोड़कर प्रियवचनों से स्वजन, परिजन, सबसे क्षमा माँगे एवं सबको क्षमा कर दे। अपने सम्पूर्ण जीवन के पापों की आलोचना करके, आजीवन के लिए पाँचों पापों का त्याग करे। शोक, भय, विषाद आदि को छोड़कर श्रुत रूपी अमृत का पान करे और क्रमशः इस प्रकार कषायों को कृश करता हुआ अपनी काया को कृश करने के लिए सर्वप्रथम इष्ट रस, इष्ट वस्तु का त्याग करे, पुनः गरिष्ठ रसों का त्याग करके, मोटे (ठोस) अनाज का त्याग करके पेय को बढ़ाए, फिर छाछ एवं गरम जल को ग्रहण करे, ऐसा करता हुआ जल का भी त्याग करके उपवास धारण करे एवं पञ्च नमस्कार का जाप, पाठ, ध्यान करते हुए देह का विसर्जन करे।

सन्यास मरण के तीन भेद हैं-

१. **भक्त प्रत्याख्यान** - आहार का त्याग करके इसमें वैयावृत्ति स्वयं भी करता है एवं दूसरों से भी कराता है।

२. **इंगिनीमरण** - इसमें वैयावृत्ति स्वयं करता है, दूसरों से नहीं कराता है।

३. **प्रायोपगमन** - इसमें वैयावृत्ति न स्वयं करते हैं, न दूसरों से करवाते हैं। जिस आसन में बैठता है, उसी आसन से शरीर को छोड़ देता है।

सल्लेखना एवं आत्महत्या में अंतर - आत्महत्या कषायों से प्रेरित होकर की जाती है तो सल्लेखना का मूल आधार समता है। आत्मघाती को आत्मा की अविनश्वरता का भान नहीं होता है। वह तो शरीर के नष्ट हो जाने को ही जीवन मुक्ति समझता है। जबकि सल्लेखना का प्रमुख आधार आत्मा की अमरता को समझकर अपनी परलोक यात्रा को सुधारना है। सूर्योदय की लाली सल्लेखना के समान है जो हमें प्रकाश की ओर ले जाती है एवं सूर्यास्त की लाली आत्मघात के समान है जो हमें अंधकार की ओर ले जाती है। समाधि कराने वाले आचार्य को निर्यापक आचार्य कहते हैं।

आत्महत्या कषायों से प्रेरित होकर की जाती है तो सल्लेखना का मूल आधार समता है। आत्मघाती को आत्मा की अविनश्वरता का भान नहीं होता है। वह तो शरीर के नष्ट हो जाने को ही जीवन मुक्ति समझता है। जबकि सल्लेखना का प्रमुख आधार आत्मा की अमरता को समझकर अपनी परलोक यात्रा को सुधारना है। सूर्योदय की लाली सल्लेखना के समान है जो हमें प्रकाश की ओर ले जाती है एवं सूर्यास्त की लाली आत्मघात के समान है जो हमें अंधकार की ओर ले जाती है। समाधि कराने वाले आचार्य को निर्यापक आचार्य कहते हैं।

सल्लेखना का फल- अतिचार से रहित सल्लेखना करने वाला नियम से स्वर्ग जाता है, वहाँ के सुखों को भोगकर मनुष्य होकर मोक्ष को प्राप्त होता है। जिसने एक बार सल्लेखना धारण कर मरण किया है, वह अधिक -से - अधिक ७-८ भव में एवं कम से कम २-३ भव में नियम से मोक्ष चला जाता है।

वीतराग सम्यक्त्व

जैसे किसी व्यक्ति से कहा जाए कि साइनाइड की एक बूंद है इसका स्वाद बता दो हम तुम्हें एक लाख रुपया देंगे तो वह कहेगा कि अरे हम स्वाद बताने तक जिन्दा ही नहीं रहेंगे। उसे कितना भी प्रलोभन दिया जाए तो भी टेस्ट (स्वाद) बताने की बात अलग, शीशी भी हाथ में नहीं लेगा क्योंकि उसे पक्का श्रद्धान है कि यह हमारे लिए घातक है। अतः विषयों के प्रति जब साइनाइड जैसी श्रद्धा होती है तब वीतराग सम्यक्त्व होता है।

हम प्यासे हमको ज्ञान की गंगा पिलाइए ।
गुरुवर हमारे गाँव में इक बार आइए ।।
ये झोपड़ी हमारी तो बूँदों को तरसती ।
बदली जो भी आती, महलों पै बरसती ।।
अब हम पै आप प्रेम की धारा बहाइए ।। गुरुवर ....
चन्दना को जैसे महावीर जी मिले ।
या अहिल्या को जैसे श्रीराम जी मिले ।।
त्यों हम है भरत आप राम बन के आइए ।। गुरुवर ....
बिना नीर-जैसे मीन मरे तड़फ के ।
आप बिना हम भी दुखी बड़े बिलखते ।।
हम बने जीवंत आप मन में आइए ।। गुरुवर ....

मांगने से महत्व कम होता है, सहन करने से निर्जरा और संवर होता है।

परोपकार

एक बुढ़िया थी। उसके लड़के का नाम राजेन्द्र था। घर में बड़ी गरीबी थी। बुढ़िया ने कहा – पुत्र! बाजार में जाओ, पूछकर आओ कि अपनी गरीबी कैसे दूर हो? राजेन्द्र गया। दुकानदारों से पूछने लगा। एक व्यापारी ने कहा– यहां से पचास कोस पर एक महात्मा रहता है, वह इस प्रश्न का उत्तर देने में समर्थ है।

घर आया और बोला – माँ, मुझे आशीर्वाद दो, मैं जाता हूँ महात्मा जी के पास उन प्रश्न का उत्तर लेने। माँ ने खुशी–खुशी विदाई दी। वह चला। चलते–चलते एक गाँव आ गया। रात हो गई। उसने सेठ की हवेली में विश्राम लिया। सुबह जाने लगा तब सेठानी ने जानकारी ली। वह बोली मेरे भी एक प्रश्न का उत्तर ले आना – मेरी लड़की कब बोलेगी? राजेन्द्र आगे बढ़ा। जंगल में एक साधु मिल गए। बातचीत हुई। साधु ने कहा – मुझे साधु हुए पचास वर्ष हो गए किंतु अभी तक साधुत्व का आनन्द क्यों नहीं आया? इस प्रश्न का भी उत्तर लाना।

वह आगे चला – मार्ग में माली मिला। उसने कहा – इस वृक्ष के चारों तरफ कोई भी वृक्ष जड़ क्यों नहीं पकड़ रहा है, इसका उत्तर अवश्य लाना। राजेन्द्र महात्मा जी के पास पहुँचा। नमस्कार किया और बोला – मैं कुछ प्रश्नों का उत्तर लेने आया हूँ। कृपा कीजिए। महात्मा ने कहा – इस समय एक साथ तीन प्रश्नों का उत्तर दे सकता हूँ, चाहे जो पूछ सकते हो। राजेन्द्र विषम समस्या में पड़ गया। प्रश्न चार हैं। आखिर अपना प्रश्न छोड़कर उन तीनों प्रश्नों का उत्तर लेकर वापस चला।

माली मिला। राजेन्द्र ने कहा माली! इस वृक्ष के चारों तरफ मोहरों से भरे हुए चार कलश हैं। जब तक कलश रहेंगे, तब तक कोई भी दूसरा वृक्ष जड़ नहीं पकड़ेगा। माली ने वहाँ खोदा । चार कलश मिल गये। माली ने आभार प्रदर्शित करते हुए कहा – राजेन्द्र! मोहरों का यह कलश देता हूँ। कलश लेकर वह आगे चला। साधु मिले उसने कहा – महाराज! आपकी जटा में रत्न हैं। जब तक यह रहेगा, साधुत्व का स्वाद नहीं आएगा। साधु ने कहा – तुम उपकारी हो, यह लो रत्न।

राजेन्द्र सेठानी के घर पहुँचा। उसने कहा – आपकी लड़की जब अपने पति का मुँह देखेगी, वह बोलने लग जाएगी। वह लड़की वहाँ आ गई। राजेन्द्र को देखते ही बोलने लगी। सेठानी ने कहा – इसके पतिदेव आप ही हैं। राजेन्द्र का विवाह हो गया। लाखों का धन लेकर राजेन्द्र रथ में धर्मपत्नी सहित घर पहुँचा। माँ ने पूछा पुत्र! गरीबी कैसे दूर होगी, उत्तर ले आया? पुत्र बोला – माता जी, आपके आशीर्वाद से लाखों का धन मिल गया और साथ में मेरा विवाह भी हो गया। उसने आदि से अंत तक की कहानी सुनाई। वह अब ठाठ–बाट से रहने लगा। गरीबी दूर हो गई।

शिक्षा– जो व्यक्ति दूसरों का उपकार करते हैं, दूसरों का भला करते हैं, उनका भला अपने आप ही हो जाता है किन्तु परोपकारी संसार में विरले मिलते हैं। महापुरुष पर – उपकार के लिए जीवन खपा देते हैं।

जिस भजन में गुरु

जिस भजन में गुरु का नाम न हो, उस भजन को गाना ना चाहिए।
जिस जगह में गुरु के चरण न हो, उस जगह में जाना ना चाहिए।।

जिस माँ ने हमको जन्म दिया, उसे कभी भुलाना न चाहिए।
जिस पिता ने हमको पाला है, उसे कभी सताना न चाहिए।।

चाहे गरीबी कितनी ज्यादा हो, प्रभु नाम भुलाना न चाहिए।
चाहे बिटियाँ कितनी सुन्दर हो, उसे घर–घर घुमाना न चाहिए।।

चाहे भैय्या कितना बेरी हो, उसे हाथ उठाना न चाहिए।
अपने घर की बातों को, कभी बाहर सुनाना न चाहिए।।

जिस सभा में अपना मान न हो, उस सभा में जाना न चाहिए।
जिस विषय में खुद को ज्ञान न हो, उसे कभी बताना न चाहिए।।

एक व्यक्ति की मेरी नजर में कद्र बहुत है,
भला तो वो भी नहीं है पर बुरा कम है।

करता रहूँ गुणगान, मुझे दो ऐसा वरदान,
तेरा नाम लेते–लेते, इस तन से निकले प्राण।
इस तन से निकले प्राण।।टेक।।
पुण्य उदय से मेरे भगवन, मैंने यह नर तन पाया,
संयम पालन में बाधाएँ डाले, जग की मोह माया।
फिर भी ये अरज करता हूँ, हो सके तो देना ध्यान।।
करता रहूँ गुणगान.....।।
सीता चंदनबाला–जैसी, दुख सहने की शक्ति दो,
विचलित न हूँ पथ से भगवन, मुझमें ऐसी भक्ति दो।
तेरी भक्ति में ही बीते, इस जीवन की हर शाम,
करता रहूँ गुणगान.....।।
क्या मालूम कब कौन किस घड़ी मेरा बुलावा आ जाए,
मेरे मन की इच्छा मेरे मन ही मन में रह जाए।
मेरी इच्छा पूरी करना हे जिनवर दया निधान,
करता रहूँ गुणगान.....।।

२८.अ जैन दानवीर श्रावक - भामाशाह

भामाशाह, राणा उदयसिंह के समय से ही मेवाड़ राज्य का दीवान एवं प्रधानमंत्री था। हल्दी घाटी के युद्ध (१५७६ ई.) में पराजित होकर स्वतंत्रता प्रेमी और स्वाभिमानी राणाप्रताप जंगलों और पहाडो में भटकने लगे थे। वहाँ भी मुगल सेना ने उन्हें चैन नहीं लेने दिया। अतएव सभी ओर से हताश और निराश होकर उन्होंने स्वदेश का परित्याग करके अन्यत्र जाने का संकल्प किया। इस बीच स्वदेश भक्त एवं स्वाभिमानी मंत्रीश्वर भामाशाह चुप नहीं बैठा था। वह देशोद्धार के उपाय में जुटा रहा। ठीक जिस समय राणा भरे मन से मेवाड की सीमा से विदाई ले रहा था। वहाँ भामाशाह आ पहुँचा और मार्ग रोक कर खड़ा हो गया। उसने राणा प्रताप को ढाढस बंधाई और देशोद्धार के लिए उत्साहित किया।

राणा के कहा- न मेरे पास फूटी कौड़ी है न सैनिक और न साथी ही, फिर किस बूते पर प्रयत्न करूँ। भामाशाह ने तुरन्त इतना विपुल द्रव्य उनके चरणों में समर्पित कर दिया। जिससे २५ हजार सैनिकों का १२ वर्षों तक निर्वाह हो सकता था। यह सब धन भामाशाह का अपना पैतृक एवं स्वयं उपार्जित किया हुआ था। इस अप्रतिम उदारता एवं अप्रत्याशित सहायता पर राणा ने हर्ष विभोर होकर भामाशाह को गले लगा लिया। वह दुगुने उत्साह से सेना जुटाने और मुगलों को देश से बाहर करने में जुट गया। अनेक युद्ध लड़े गए जिस में वीर भामाशाह और ताराचन्द्र ने भी प्राय: बराबर भाग लिया। इन दोनों भाइयों ने मालवा पर जो मुगलों के आधीन था, चढ़ाई करके २५ लाख रुपए और २० हजार अशर्फियाँ दण्ड स्वरूप प्राप्त कर राजा को समर्पित की और राज्य के गॉव-गॉव में प्राणों का संचार कर दिया।

सैनिकों को जुटाना युद्ध सामग्री की व्यवस्था और युद्ध में भाग लेना आदि हर प्रकार से देश के उद्धार को सफल बनाने में पूर्ण योगदान दिया। इन प्रयत्नों का परिणाम यह हुआ कि मेवाडी वीरों की रणभेदी के बाद मुगल सैनिकों के पैर उखडने लगे और १५८६ ई. तक चित्तौड़ और माण्डवगढ़ को छोड़कर सम्पूर्ण मेवाड़ पर राजा का पुन: अधिकार हो गया। अपनी इस उदार और अपूर्व सफलता के कारण भामाशाह मेवाड़ का उद्धारकर्ता कहलाया।

मेवाड़ प्रतिष्ठा के पुन: स्थापक, स्वार्थ त्यागी, वीरश्रेष्ठ एवं मंत्री प्रवर भामाशाह का जन्म सोमवार २८ जून १५४७ ई. को हुआ था और निधन लगभग ५२ वर्ष की आयु में २७ जनवरी १६००ई. में हुआ था, जीवाशाह, भामाशाह का सुयोग्य पुत्र था। उदयपुर में भामाशाह की समाधि अभी भी विद्यमान है। इस नररत्न ने एक सच्चे जैन के उपर्युक्त आचरण द्वारा स्वधर्म, स्वसमाज एवं स्वदेश को गौरवान्वित किया।

आचार्य व ग्रन्थ की प्रामाणिकता

कोई ग्रन्थराज दो हजार वर्ष पुराना है अत: प्रथम, द्वितीय शताब्दी का है या वह ग्रंथ राज बड़ा है अत: एक हजार श्लोक प्रमाण है, भले ही आर्ष पद्धति के विपरीत है तो क्या प्रामाणिक है? नहीं अथवा वह प्राकृत व संस्कृत भाषा में रचित है पर आर्ष परंपरा के अनुकूल नहीं तो क्या प्रामाणिक है? नहीं।

ग्रन्थराज की प्रमाणिकता व अप्रामाणिकता काल से नहीं है और न ही उसके विशाल कलेवर के होने से है और न ही संस्कृत, प्राकृत भाषा से है। भले ही छोटा ग्रन्थराज छहढाला हो या बीसवीं शताब्दी का हो अथवा संस्कृत प्राकृत भाषाएँ न होकर हिन्दी भाषा में हो पर आर्ष परंपरा के अनुकूल है। उसमें वीतरागता की छाप है तो वह प्रामाणिक है।

इसी प्रकार जो आचार्य महावीर की परंपरा के हैं तो प्रामाणिक हैं और महावीर की परंपरा के प्रतिकूल हैं तो अप्रामाणिक।

और हमारे लिए मूर्ति भी चाहे छोटी हो या बड़ी, रजत की हो या स्वर्ण की, प्रस्तर की हो या ताम्र की। पर यदि वीतरागता की छाप है तो पूज्य है। बहुत बड़ी चौदह मन की भी सराग प्रतिमा है तो पूज्य नहीं और छोटी प्रस्तर की प्रतिमा चाहे वह शिल्पकार से ठीक भी न बनी हो पर वीतराग छवि को दर्शाने वाली है तो वह प्रमाणिक है।

जैसे सौ का नोट बिलकुल नया, कड़क, प्रेस से निकला हुआ और एक मैला-कुचैला सौ का नोट दोनों की कीमत क्या?

जो अच्छा नया कड़क है उसका क्या एक सौ एक रुपया आएगा, और मैला कुचैला है उसके नब्बे रुपए? नहीं। दोनों की कीमत बराबर है। क्योंकि कीमत नए व पुराने की नहीं बल्कि उसमें जो गवर्नर की छाप है उसकी है। ठीक इसी प्रकार ग्रन्थराज व प्रतिमा की प्रामाणिकता भी काल से व बड़े होने से नहीं बल्कि वीतरागता की छाप से है।

समय का मूल्य

सेठ मनीराम की पुस्तकों की एक दुकान थी। सेठ जी नीतिज्ञ होने के साथ-साथ सदाचारी भी थे। सारा शहर उनको सम्मान की दृष्टि देखता था। एक दिन उनकी दुकान पर एक ग्राहक आया। उसने नौकर से कहा - मुझे यह पुस्तक खरीदनी है, इसकी कीमत क्या है? नौकर ने उत्तर दिया दस रुपए। ग्राहक ने कहा इस छोटी-सी पुस्तक का दस रुपए? कम नहीं हो सकता ? नौकर - नहीं।

ग्राहक चिन्ता के गहन सागर में डुबकियाँ लगाने लगा। कैसे खरीदूँ यह पुस्तक ? कीमत अधिक है। आखिर ग्राहक ने पूछा क्या सेठ जी अन्दर हैं ? उनसे मिलना चाहता हूँ।

नौकर और ग्राहक का संवाद चल ही रहा था कि इतने में अचानक सेठ जी ने दरवाजा खटखटाया। ग्राहक ने सत्कार भरी वाणी से कहा - सेठ जी नमस्कार! आपकी ही प्रतीक्षा में बैठा था। अच्छा हुआ आप शीघ्र पधार गए।

सेठ जी ने कहा बोलो भाई! क्या काम है ? किसलिए प्रतीक्षा कर रहे थे?

ग्राहक - सेठ जी! इस पुस्तक की कम-से-कम क्या कीमत है?

सेठ जी - ग्यारह रुपए।

ग्राहक - अभी तो आपके नौकर ने दस रुपए कहा था।

सेठ जी - बिल्कुल सही है, क्योंकि मैं अपना काम छोड़कर आया हूँ। इससे मेरा समय भी तो खर्च हुआ, वह कहाँ जाएगा ?

ग्राहक के आश्चर्य का पार नहीं रहा। अरे यह क्या? कुछ समझ में नहीं आ रहा है। सेठ जी कहीं नशे में तो नहीं हैं?

आखिर उसने कहा सेठ जी! मोलतोल करना तो रहने दीजिए, अच्छा हो मुझे इसकी कम-से-कम कीमत बता दें, तो मैं खरीद लूँ। सेठ जी - बारह रुपए।

ग्राहक - वाह-वाह! क्या आप भी बच्चों-जैसा खिलवाड़ कर रहे हैं। अभी तो आपने ग्यारह रुपए कहा था और अब बारह रुपए!

सेठ जी - हाँ मैंने पुस्तक की कीमत उस समय ग्यारह रुपए कही थी। पर अब तो उसकी-कीमत बारह रुपए है और जरा ध्यान से सुन लीजिए ज्यों-ज्यों आप देरी करेंगे, पूछताछ कर हमारा अमूल्य समय नष्ट करते जाएंगे त्यों-त्यों पुस्तक की कीमत पर समय का मूल्य भी बढ़ता जाएगा। यदि आपको पुस्तक लेनी है तो शीघ्र ले लीजिए। कुछ समय पश्चात् पुस्तक की कीमत तेरह रुपए हो जाएगी।

ग्राहक ने सोचा अब अधिक भाव-ताव करना उचित नहीं है क्योंकि क्रमशः मूल्य में वृद्धि हो रही है। तुरन्त जेब से रुपए निकाल कर दे दिए और पुस्तक खरीद कर अपने घर की राह ली। घर पहुँचा। सोचने लगा कीमत क्रमशः क्यों बढ़ती गई। आखिर उसने यही निष्कर्ष पाया कि समय ही सच्चा धन है। समय से बढ़कर संसार में कोई भी अमूल्य निधि नहीं है। समय को व्यर्थ में नष्ट करना मूर्खता है और समय का सदुपयोग करना बुद्धिमत्ता है। भगवान महावीर ने कहा जो समय व्यतीत होता जा रहा है, वह वापस नहीं आएगा अतः प्रत्येक को समय का मूल्यांकन करना चाहिए।

समय न खोना व्यर्थ में, समय बड़ा अनमोल।
समझो कीमत समय की, अन्तर आँखें खोल॥

शिक्षा - प्रत्येक क्षण, प्रत्येक समय का सदुपयोग करना चाहिए जिससे बाद में पछताना नहीं पड़े।

- आकर्षक जेल की अपेक्षा स्वतंत्र झोपड़ी अधिक अच्छी है। गुलाम बनाने वाली नौकरी की अपेक्षा स्वतंत्रता देने वाला व्यापार श्रेष्ठ है।
- दुःख समय से पहले मिले तो व्यक्ति शायद मजबूत बनके बाहर निकलता है, लेकिन सुख समय से पहले मिले तो शायद वही व्यक्ति शैतान बनकर बाहर निकलता है।

गुरु की छाया में शरण जो पा गया ।
उसके जीवन में सुमंगल आ गया-२
गुरु कृपा ही सबसे बड़ा उपहार है।
गुरु है खेवन हारा तो नैया पार है।
प्रेम का पावन उजाला छा गया।
उसके जीवन में सुमंगल आ गया।।
वो बसा है आती-जाती श्वास में
वो तो रचा प्राण और विश्वास में
शांति सुख अमृत कोई बरसा गया।
उसके जीवन में सुमंगल आ गया।।
हम को क्या उनको हमारा ध्यान है
गुरु हैं अपने देवता श्री भगवान हैं
प्राण का पंछी बसेरा पा गया।
उसके जीवन में सुमंगल आ गया।।

पाठ्यक्रम - २८

२८.द दिग. जैन मुनि की चर्या का प्रतिपादक ग्रन्थ- मूलाचार

वट्टकेरस्वामीकृत मूलाचार दिगम्बर सम्प्रदाय में मुनिधर्म के लिए सर्वोपरि प्रमाण माना जाता है। कहीं-कहीं यह ग्रन्थ कुन्द कुन्दाचार्यकृत भी कहा गया है। इसमें १२ अधिकार और १२५२ गाथाएँ है।

१. मूलगुण अधिकार २. बृहत् प्रत्याख्यान संस्तव अधिकार ३. प्रत्याख्यान अधिकार ४. सम्यक्आचार अधिकार ५. पंचाचार अधिकार ६. पिण्ड शुद्धि अधिकार ७. षट् आवश्यक अधिकार ८. अनगार भावना अधिकार ९. द्वादशानुप्रेक्षा अधिकार १०. समयसार अधिकार ११. षट्पर्याप्ति अधिकार १२. शीलगुण अधिकार।

पहले मूलगुण अधिकार में मुनि के अट्ठाईस मूलगुणों का निरूपण किया है।

बृहत्प्रत्याख्यानसंस्तव अधिकार में दर्शनाराधना आदि चार आराधनाओं का कथन किया गया है।

प्रत्याख्यानाधिकार में सिंह, व्याघ्र आदि के द्वारा आकस्मिक मृत्यु उपस्थित होने पर कषाय और आहार का त्यागकर समताभाव धारण करने का निर्देश किया है।

सम्यक्आचाराधिकार में दश प्रकार के आचारों का वर्णन है। आर्यिकाओं के लिए भी विशेष नियम वर्णित है।

पंचाचाराधिकार में दर्शनाचार, ज्ञानाचार आदि पाँच आचारों और उनके प्रभेदों का विस्तार सहित वर्णन है।

पिण्डशुद्धि अधिकार में एषणा समिति, आहारयोग्य काल, भिक्षार्थगमन करने की प्रवृत्ति-विशेष आदि का भी वर्णन आया है।

सप्तम षडावश्यकाधिकार में कृति कर्म, कायोत्सर्ग के दोष आदि का वर्णन है।

आठवें अनगारभावनाधिकार में लिंग, व्रत, वसति, विहार, भिक्षा, ज्ञान, शरीर, संस्कारत्याग, वाक्य, तप और ध्यानसंबंधी शुद्धियों के पालन पर जोर दिया गया है।

नवम द्वादशानुप्रेक्षाधिकार में अनित्य आदि अनुप्रेक्षाओं के चिन्तन का वर्णन है।

दशम समयसाराधिकार में तप, ध्यान, प्रतिक्रमण, प्रतिलेखनक्रिया विभिन्न प्रकार की शुद्धियों का निरुपण आया है।

ग्यारहवें पर्याप्ति-अधिकार में छह पर्याप्तियों का निरूपण है। पर्याप्ति के संज्ञा, लक्षण, स्वामित्व, संख्या, परिमाण, निवृत्ति और स्थिति काल के छः भेद किए हैं। इन सभी भेदों का विस्तारपूर्वक वर्णन किया है।

बारहवें शीलगुणाधिकार में शीलों के उत्पत्ति क्रम आलोचना के दोष, गुणों की उत्पत्ति प्रकार संख्या और प्रस्तार के निकालने की विधि का विस्तारपूर्वक वर्णन आया है। इस महाग्रन्थ में मुनि के आचार का बहुत ही विस्तृत एवं सुन्दर वर्णन किया गया है। यतिधर्म को अवगत कराने के लिए एक स्थान पर इससे अधिक सामग्री का मिलना दुष्कर है।

दिग. जैन श्रावक की चर्या का प्रतिपादक ग्रन्थ- रत्नकरण्डश्रावकाचार

ईसा की द्वितीय शताब्दी में आचार्य समन्तभद्र स्वामी द्वारा श्रावक के जीवन और आचार की व्याख्या करते हुए १५० पद्यों की रचना संस्कृत भाषा में की गई। इस ग्रन्थ में सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र का विवेचन करते हुए सल्लेखना को भी श्रावकों के व्रतों में स्थान दिया है। इसका दूसरा नाम समीचीन धर्मशास्त्र भी है। इस ग्रन्थ पर प्रभाचन्द्र आचार्य द्वारा संस्कृत टीका एवं अनेक विद्वानों द्वारा हिन्दी टीका भी लिखी गई है।

सर्दी का समय था एक दिन प्रातः काल आचार्य श्री के पास कुछ महाराज लोग बैठे हुए थे, ठण्डी हवा चल रही थी और सभी को ठण्ड लग रही थी, शरीर से कँपकपी उठ रही थी। तभी एक मुनिराज ने आचार्य श्री से कहा देखिये आचार्य श्री जी शरीर से कांटे उठ रहे हैं। आचार्य श्री ने कहा- ''हाँ, शरीर से काँटे ही उठते हैं फूल नहीं।'' शरीर दुख का घर है। इसके स्वभाव को जानो और वैराग्य भाव जाग्रत करो। शरीर को नहीं बल्कि शरीर के स्वभाव को जानने से वैराग्य भाव उत्पन्न होता है।

।। पूर्णोदय दोहावली ।।

उच्च-कुलों में जन्म ले, नदी निम्नगा होय।
शांति, पतित को भी मिले, भाव बड़ों का होय॥ 1॥
एक साथ सब कर्म का उदय कभी ना होय।
बूँद-बूँद कर बरसते, घन, वरना सब खोय॥ 2॥
आत्मामृत तज विषय में, रमता क्यों यह लोक।
खून चूसती दुग्ध तज, गौ-थन में क्यों जोंक॥ 3॥
जठरानल अनुसार हो, भोजन का परिणाम।
भावों के अनुसार ही, कर्म बन्ध-फल-काम॥ 4॥
शील नशीले द्रव्य के, सेवन से नश जाय।
संत-शास्त्र-संगति करे, और शील कस जाय॥ 5॥
एक तरफ से मित्रता, सही नहीं वह मित्र।
अनल पवन का मित्र ना, पवन अनल का मित्र॥ 6॥
वश में हो सब इन्द्रियाँ, मन पर लगे लगाम।
वेग बढ़े निर्वेग का, दूर नहीं फिर धाम॥ 7॥
विगत अनागत आज का, हो सकता श्रद्धान।
शुद्धातम का ध्यान तो, घर में कभी न मान॥ 8॥
सन्तों के आगमन से, सुख का रहे न पार।
सन्तों का जब गमन हो, लगता जगत असार॥ 9॥
नीर-नीर है क्षीर ना, क्षीर-क्षीर ना नीर।
चीर-चीर है जीव ना, जीव-जीव ना चीर॥10॥
बान्धव रिपु को सम गिनो, संतों की यह बात।
फूल चुभन क्या ज्ञात है? शूल चुभन तो ज्ञात॥ 11॥
नाम बने परिणाम तो, प्रमाण बनता मान।
उपसर्गों से क्यों डरो, पार्श्व बने भगवान॥ 12॥
आप अधर मैं भी अधर, आप स्व वश हो देव।
मुझे अधर में लो उठा, परवश हूँ दुर्देव॥ 13॥
व्यास बिना वह केन्द्र ना, केन्द्र बिना ना व्यास।
परिधि तथा उस केन्द्र का, नाता जोड़े व्यास॥ 14॥
केन्द्र रहा सो द्रव्य है, और रहा गुण व्यास।
परिधि रही पर्याय है, तीनों में व्यत्यास॥ 15॥
व्यास केन्द्र या परिधि को, बना यथोचित केन्द्र।
बिना हठाग्रह निरख तू, निज में यथा जिनेन्द्र॥ 16॥
विषम पित्त का फल रहा, मुख का कडुवा स्वाद।
विषम वित्त से चित्त में बढ़ता है उन्माद॥ 17॥
कानों से तो हो सुना, आँखों देखा हाल।
फिर भी मुख से ना कहे, सज्जन का यह ढाल॥ 18॥
बाल गले में पहुँचते, स्वर का होता भंग।
बाल गेल में पहुँचते, पथ दूषित हो संघ॥ 19॥
चिन्ता ना परलोक की, लौकिकता से दूर।
लोक हितैषी बस बनूँ, सदा लोक से पूर॥ 20॥

बिन तेरे गुरुवर मेरा हर गीत अधूरा लगता है,
बिन तेरे जीवन का हर संगीत अधूरा लगता है,
सम्यक् पथ पर चलने का ऽऽ² संकल्प अधूरा लगता है।।
बिन तेरे गुरुवर मेरा.....।।
मैं अबोध बालक था गुरुवर, तुमने चलना सिखलाया,
सुख-दुख में प्रिय-अप्रिय में, समता में ढलना सिखलाया।
आर्यजनों की संगति में, मिश्री-सा घुलना सिखलाया,
सदा स्व-पर उपकारी बन, दीपक-सा जलना सिखलाया।
बिन तेरे अपने पर का ऽऽऽ² हर दर्द अधूरा लगता है।।
बिन तेरे गुरुवर मेरा.....।।
भक्ति के स्वर ताल मधुर, झंकार तुम्हीं से है गुरुवर,
मन वीणा के तारों की, टंकार तुम्हीं से है गुरुवर।
शब्दों के लालित्य स्वरों में, जान तुम्हीं से है गुरुवर,
सच पूछो स्वर शब्दों की, पहचान तुम्हीं से है गुरुवर।
बिन बाती, बिन ज्योति के ऽऽऽ² हर दीप अधूरा लगता है।।
बिन तेरे गुरुवर मेरा.....।।

आत्म शक्ति से ओत-प्रोत विद्या और ज्ञान से भर दो।
गुरुवर ऐसा वर दो।
रहे मनोबल अचल मेरु सा तनिक नहीं घबराऊँ।
प्रबल आँधियाँ रोक सके ना, आगे बढ़ता जाऊँ।
उड़ जाऊँ निर्बाध लक्ष्य तक, गुरुवर ऐसे पर दो।
गुरुवर ऐसा.....।।
है अज्ञान निशा अंधियारी तुम दिनकर बन आओ।
ज्ञान और भक्ति की शिक्षा, बालक को समझाओ।
विनय भरा गुरु ज्ञान मुझे दो, मन ज्योतिर्मय कर दो।
गुरुवर ऐसा.....।।
सुमति सुजस सुख संपति दाता, हे गुरुवर अपना लो।
संत समागम चाहूँ मैं, मुझे अपने पास बिठा लो।
जैसा भी हूँ तेरा ही हूँ, हाथ दया का धर दो।
गुरुवर ऐसा.....।।

दुःख अपने लिये रखें, आनन्द सबके लिए